

राष्ट्र के निर्माण में अभिभाषकों की भूमिका

[राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एवं लाल बहादुर शास्त्री के जन्मदिवस पर 'डिस्ट्रिक्ट कोर्ट बार एसोसिएशन, द्वारका' द्वारा आयोजित दिनांक 02.10.2007 को आयोजित कार्यक्रम में माननीय न्यायमूर्ति श्री रमेशचन्द्र लाहोटी, पूर्व प्रधान न्यायाधीश, भारत का मुख्य अतिथि के आसन से दिया गया वक्तव्य]

शस्य श्यामला भारत भूमि पर जन्म लेने वाले दो महान व्यक्ति— महात्मा गांधी और लाल बहादुर शास्त्री के जन्मोत्सव और स्वतंत्र संग्राम की सदी के अवसर पर आप सबको हार्दिक बधाई। आज के समाचार पत्रों में पढ़े अखिल भारतीय और स्थानीय समाचारों से और अन्यथा भी जो जानकारी मुझे मिली है उसके अनुसार कदाचित द्वारिका अभिभाषक संघ ही अभिभाषकों की एकमात्र ऐसी संस्था है जो आज का दिन एक उत्सव और समारोह के रूप में मना रही है। आपकी संस्था और इस संस्था के प्रत्येक सदस्य को हार्दिक बधाई और इस आयोजन के लिए साधुवाद। इस आयोजन में सम्मिलित होने का अवसर मुझे प्रदान करने के लिए भी मैं आपका आभारी हूँ।

श्री शिव खेरा जो इस आयोजन के प्रमुख वक्ता हैं उन्हें हम आज के मुख्य विषय— 'राष्ट्र के निर्माण में अभिभाषकों की भूमिका' पर सुनेंगे। मैं आपके समक्ष केवल यह जानकारी देने के लिए खड़ा हुआ हूँ कि आज की इस संध्या मैं यहां क्यों आया हूँ। मेरे परिचय में कहा गया है कि मैं न्यायाधीश और तदनन्तर भारतवर्ष का प्रधान न्यायाधीश रहा किन्तु यह मेरा वास्तविक परिचय नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि मैं जन्मजात वकील हूँ। छोटी आयु में जब मैं सोता था तो कभी-कभी सोते-सोते भी बोला करता था। यह देखकर मेरी मां कहती थी कि यह लड़का ज़रूर वकील बनेगा, यह नींद में भी बोलता है। उनकी वाणी सत्य हुई और मैं वकील बना। लगभग 26 वर्ष मैंने वकालत की और लगभग 17 वर्ष 6 महीने न्यायाधीश रहा। बीते हुए समय पर दृष्टि डालता हूँ लगता है कि न्यायाधीश का आवरण कुछ समय के लिए एक ठोस जन्मजात वकील के व्यक्तित्व पर चढ़ गया था जिससे मुक्त होकर आज फिर वहीं लौट आया हूँ। मैं सक्रिय वकालत तो नहीं कर सकता किन्तु अब वकीलों के साथ मिलने, उठने, बैठने के अवसर प्रतिदिन मिलने लगे हैं। मेरा मूल व्यक्तित्व फिर लौट आया है। कृष्ण बिहारी नूर का एक शेर याद आता है। उन्होंने कहा है—

अब तो ले दे के यही शर्ख्स बचा है मुझमें, मुझको मुझसे अलग करके, छोड़ा है मैंने

इसीलिए जब अभिभाषक बन्धुओं से किसी आयोजन में आने का निमंत्रण मिलता है तो अस्वीकार करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, तुरंत स्वीकार कर लेता हूँ और ठीक समय पर अपनी बिरादरी में आकर बैठ जाता हूँ। यह है पहला कारण।

दूसरा कारण। मुझे बताया गया कि न्यायमूर्ति श्री एस. एन. झा भी इस आयोजन में भाग लेंगे और विशिष्ट अतिथि का स्थान सुशोभित करेंगे। राजस्थान के मुख्य न्यायाधीश के पद से सेवा निवृत्त होने के उपरान्त वे कहां थे यह मुझे पता नहीं चल पाया था। मैं उनसे मिलने को उत्सुक था। आज इस आयोजन में उनसे मेरी मुलाकात हुई। मैं उनसे प्रभावित हूं। उच्चतम न्यायालय के एक वरिष्ठ न्यायाधीश और तदनन्तर प्रधान न्यायाधीश की हैसियत से मैंने उन्हें एक न्यायाधीश, जम्मू कश्मीर के मुख्य न्यायाधीश और तदनन्तर राजस्थान के मुख्य न्यायाधीश के रूप में कार्य करते हुए पारखी और पैनी नज़रों से देखा है। उनकी गंभीरता, सादगी, व्यक्तित्व में समाहित एक आदर्श न्यायाधीश के गुण और इसके अतिरिक्त उनकी कुशल प्रशासनिक क्षमता, इन सबकी अनुभूति मुझे है। तीव्र विवाद से युक्त विषयों पर प्रतिकूलता और संघर्षों के बीच भी निर्द्वन्द्व, शांत और स्थिर रह कर समाधान निकालते हुए मैंने उन्हें देखा है। उनमें ऐसा बहुत कुछ है जो सीखा जा सकता है। इसलिए उनका सानिध्य पाने का लोभ संवरण कर पाना कठिन है।

श्री शिव खेरा एक विलक्षण व्यक्तित्व हैं। वे जब बोलते हैं तो श्रोता मंत्र मुग्ध हो जाते हैं। श्रोता स्वयं ही नहीं, उनकी कलाइयों पर बंधी हुई घड़ियों के कांटे भी मंत्र मुग्ध हो जाते हैं और लगता है कि घड़ी के कांटे जैसे ठहर गए हैं। मेरा उनसे सबसे पहले परिचय अप्रत्यक्ष रूप से हुआ था, उनकी पुस्तक 'जीत आपकी' (You can Win) के द्वारा। व्यक्तिगत परिचय मध्यप्रदेश के महाधिवक्ता रह चुके श्री विवेक तनखा ने करवाया जो उनके भी मित्र हैं और मेरे भी। दिल्ली की 'हयात रिजेन्सी' में उनका तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम था। श्री तनखा की प्रेरणा से मैंने उसमें भाग लिया था। आज एक गोपनीय बात सार्वजनिक कर रहा हूं। प्रशिक्षण कार्यक्रम शुक्रवार, शनिवार और रविवार का था। शनिवार, रविवार की तो कोई बात नहीं किन्तु शुक्रवार न्यायालय का कार्यदिवस था और मैं उस समय दिल्ली उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद पर आसीन था। एक न्यायाधीश के रूप में जब तक कोई बहुत ही विशिष्ट कारण न हो मैं न्यायालय का कार्य छोड़कर कहीं नहीं जाता था और न ही छुट्टी लेता था। यह मेरा नियम, सिद्धांत था। परन्तु उनके प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने के लिए मैंने एक दिन का अवकाश लिया था। जो मैंने सीखा और समझा उसके आधार पर मैं यह आत्मविश्वास के साथ कह सकता हूं कि मेरे एक दिन का शुक्रवार का समय व्यर्थ नहीं गया बल्कि विनियोजित हुआ। उस कार्यक्रम में भाग लेने के उपरान्त मेरी कार्यशैली और जीवन पद्धति में ऐसा परिवर्तन आया कि मैंने कम समय में अधिक काम और वह भी अधिक कुशलतापूर्वक निपटाना सीखा। एक दिन का न्यायालय से अवकाश लेने के कारण जिस अपराधबोध से मैं ग्रस्त हुआ था उसका ऐसा परिमार्जन हुआ कि मैंने न्यायालय के अनेक काम के घंटे और काम के दिवस बचाए। उस प्रशिक्षण कार्यक्रम से जो मैंने सीखा उसे व्यवहार में प्रयोग करने के उपरान्त उनकी 'जीत आपकी' पुस्तक मैंने अपनी निकट की बुकशेल्फ में रखी। पुस्तक पर कवर चढ़ाया जिसके कारण छपा हुआ 'जीत आपकी' छिप गया और चढ़े हुए कवर पर मैंने लिखा 'जीत मेरी'। अंग्रेजी संस्करण की पुस्तक के कवर पर मैंने लिखा 'I can Win' पुस्तक उनकी है किन्तु जो कुछ

मैंने उनसे ग्रहण किया है वह मेरा अपना है। 'आज़ादी से जीयो' (Freedom is not Free) पुस्तक में उन्होंने कुछ ऐसे प्रश्न उठाए हैं जिनकी चर्चा संभवतः वे आज भी करेंगे। क्या स्वतंत्र होकर भी हम स्वतंत्र हैं? यदि नहीं, तो क्यों नहीं? क्या समस्याएं हैं? और, समाधान क्या हैं? स्वतंत्र भारत के जिम्मेदार और चिन्तनशील नागरिक होने के नाते यह प्रश्न हम सभी के मन में उठते हैं, घूमते हैं और हमें उद्वेलित करते रहते हैं। स्वाभाविक है कि हम सभी जो आज बड़ी संख्या में यहां उपस्थित हैं, उन्हें सुनने को उत्सुक हैं।

और, अब अंतिम, किन्तु सबसे महत्वपूर्ण कारण। आज एक उत्सव है, राष्ट्रीय उत्सव। एक गीत जो अपने समय में बहुत लोकप्रिय हुआ था उसकी दो पंक्तियां हैं—

‘आज है 2 अक्टूबर का दिन, आज का दिन है बड़ा महान।
आज के दिन दो फूल खिले थे जिनसे महका हिन्दुस्तान।।’

आज दो अक्टूबर के दिन ऐसे दो महान व्यक्तियों ने जन्म लिया था कि जिनके त्याग, संघर्ष और क्षमता की महक आज भी भारतवर्ष के वातायन को सुगंधित कर रही है। उसी गीत की एक पंक्ति और है—

‘एक का नारा अमन, एक का जय जवान—जय किसान।’

महात्मा गांधी ने शांति और अहिंसा का संदेश सारे विश्व को दिया और यह प्रयोग करके दिखाया कि कठिन से कठिन समस्या का समाधान शांति और अहिंसा के रास्ते से खोजा जा सकता है। किसी शासन या सत्ता को उखाड़ फेंकने और स्वशासन अर्जित करने के लिए युद्ध आवश्यक नहीं है। लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय जवान—जय किसान' का नारा दिया। उसी देश में किसानों की जय होती है जिस देश में जवानों की जय होती है। यदि हमारी सीमाएं सुरक्षित नहीं हैं तो न तो इस देश का किसान खेती कर सकता है और न ही इस देश का नागरिक शांति से भरपेट भोजन कर सकता है। अपने नारे से शास्त्रीजी ने संदेश दिया कि किसान भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना जवान क्योंकि वह धरती में बीज बो कर अन्न पैदा करता है। वही हमारा अन्नदाता है। और, जब देश की अस्मिता और सुरक्षा पर आंच आती है और धरती में पड़े इस बीज को किसान जब पानी से नहीं सींच पाता तो जवान अपने रक्त से धरती को सींचने के लिए तत्पर रहता है। कोई भी देश जवान और किसान के ऋण से उऋण नहीं हो सकता।

महात्मा गांधी का जीवन विनम्रता में महानता को साकार करता है और शास्त्रीजी के जीवन से महानता में विनम्रता का दर्शन होता है।

महात्मा गांधी की एक प्रैस वार्ता के समाप्त होने पर एक विदेशी पत्रकार ने एक कागज़ उनकी ओर बढ़ाया और कहा— 'बापू, मैं अपने देश वापिस जायूंगा। आप मेरे देशवासियों को क्या संदेश देना

चाहेंगे।' बापू ने उस कागज़ पर लिखा— 'My life is my message'. (मेरा जीवन ही मेरा संदेश है)
बापू का यह संदेश उर्दू के इस शेर में प्रतिध्वनित होता है—

मेरा चेहरा मेरी जुबान है लोगो

हम अपने ओंठों से कुछ कहा नहीं करते।

भारतवर्ष के प्रथम प्रधानमंत्री स्व. पंडित जवाहरलाल नेहरू जिनका गांधीजी से बहुत निकट का संबंध रहा, उन्होंने गांधीजी के विषय में कहा है— 'Where he sat became a temple; where he trod became a holy ground' (गांधीजी जहां भी बैठे वह स्थान मंदिर हो गया; जिस भूमि ने उनके चरणों का स्पर्श किया वह पवित्र हो गई)। गांधीजी के व्यक्तित्व की इतनी श्रेष्ठ और इतनी संक्षिप्त, बूंद में सागर की भांति प्रस्तुति कोई और हो नहीं सकती।

भारत और पाकिस्तान का युद्ध हुआ। शास्त्रीजी भारतवर्ष के प्रधानमंत्री थे। उस समय पाकिस्तान के किसी नेता ने भारतवर्ष को धमकी देते हुए कुछ ऐसा कहा था कि 'हमारी सेनाओं के लिए अब दिल्ली दूर नहीं है।' प्रत्युत्तर में शास्त्रीजी ने सागर जैसी गहन, गंभीर किन्तु आत्मविश्वास की ज्वाला से भड़कती हुई आवाज़ में जो कहा था उसे मैंने स्वयं रेडियो पर सुना था। उन्होंने कहा था कि 'पाकिस्तान के नायकों को मैं बता देना चाहता हूं कि हमारी सेनाएं कराची के रास्ते लाहौर का रास्ता पहचानती हैं। यह रास्ता उस रास्ते से छोटा है जो कराची से दिल्ली तक आता है।' शास्त्रीजी के इस मुंहतोड़ जवाब के उपरांत पाकिस्तान के किसी भी नेता ने भारतवर्ष को धमकी देने का साहस नहीं किया। इतना साहसी और आत्मविश्वास से भरा हुआ विशाल व्यक्तित्व कद में छोटा किन्तु विनम्रता से भरा पड़ा था। एक बार एक पत्रकार ने श्रीमती ललिता शास्त्री से जानना चाहा कि शास्त्रीजी के व्यक्तित्व की अति विशालता किन्तु स्वभाव की अति विनम्रता का रहस्य क्या है? तो श्रीमती शास्त्री ने कहा कि गुरबानी की यह पंक्तियां शास्त्रीजी के जीवन की मार्ग दर्शक रही हैं—

नानक नन्हे बने रहो, जैसे नन्हीं दूब।

रूख सूख सब जाएंगे, दूब रहेगी दूब॥

जो अपने व्यक्तित्व को वृक्ष की तरह बड़ा बनाने और बताने की चेष्टा करते हैं उन पर प्रहार हो सकता है। उन्हें झंझावात झेलना पड़ सकता है। किन्तु, दूब जो विनम्र होती है, जो पैरों के तले रोज़ कुचली जाती है वह दूब ही रहती है। दूब की जिजीविषा का रहस्य ही यह है कि जितना उसे कुचलो वह उतनी ही बढ़ती है और उतनी ही सशक्त होती चली जाती है। विनम्रता में विजय है।

आज अंग्रेजी के एक राष्ट्रीय समाचार पत्र ने अपने मुख्य पृष्ठ पर गर्व के साथ 1869 में पोरबंदर में आज के दिन ही घटी उस घटना का उल्लेख किया है— एक बालक का जन्म जिसने इस राष्ट्र की तक्दीर ही बदल दी। एक नया इतिहास लिखा और भूगोल में लिखी परिभाषाएं उलट दीं। और, तब एक प्रश्न पूछा है कि जब इतिहास स्वयं को दोहराता है तो क्या 2 अक्टूबर नहीं दोहराया जा सकता?

क्या इस देश की 104 करोड़ की आबादी में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो गांधी हो सके और न भी हो सके तो भी गांधी के रास्ते पर चलकर इस देश की रहनुमाई कर सके? यह प्रश्न आज हम सबके सम्मुख उपस्थित है और इसी प्रश्न के उत्तर में छिपा है आज की इस सभा के मुख्य विषय का सार 'Role of Lawyers in Building the Nation '.

स्वतंत्रता संग्राम में मुख्य भूमिका वकीलों की ही थी। उन्होंने इस संग्राम को नेतृत्व दिया। यह उन्हीं के नेतृत्व की क्षमता और अनुकरण को आमंत्रण देने की शक्ति थी कि विधि व्यवसाय से जुड़े लोग स्वतंत्रता आंदोलन में गांधीजी के आह्वान पर न केवल कूद पड़े बल्कि नेतृत्व भी दिया और लक्ष्य-लक्ष्य लोगों को इस आंदोलन में खींच लिया। स्वयं महात्मा गांधी एक वकील थे। भारत जब स्वतंत्र हो गया और स्वतंत्र भारत के लिए संविधान की रचना हुई तो संविधान निर्मात्री समिति में लगभग सभी सदस्य वकील ही थे।

स्वतंत्र भारत के निर्माण में एक वकील क्या भूमिका निभा सकता है? यह प्रश्न प्रासंगिक तो है किन्तु कभी-कभी अनावश्यक सा भी लगता है। जिस मां ने बालक को जन्म दिया हो उस मां से यदि यह प्रश्न पूछा जाये कि क्या वह अपने बालक का पालन-पोषण करना चाहेगी और उसे समृद्ध और सशक्त होता देखना चाहेगी, तो यह प्रश्न अनावश्यक सा ही लगेगा। क्योंकि, उत्तर केवल सकारात्मक ही हो सकता है। विधि व्यवसायी, जिन्होंने स्वतंत्रता को जन्म देने में भूमिका निभाई हो उनसे यदि यह प्रश्न पूछा जाए कि जिस स्वतंत्रता को जन्म देने में उनकी भूमिका रही थी उसे क्या वे समृद्ध और सशक्त होते नहीं देखना चाहेंगे? उत्तर केवल एक ही होगा— अवश्य।

स्वतंत्र भारत के निर्माण में विधि व्यवसायी एक सिपाही की भूमिका का निर्वहन कर सकता है। एक पुस्तक की याद आती है— 'Battles at the Bar' जिसके लेखक के. एल. गोबा जो लाहौर में वकालत करते थे। 1956 में यह पुस्तक छपी थी। 1961 में जब मैंने विधि व्यवसाय प्रारंभ किया तो मेरी रुचि कुछ ऐसा साहित्य भी पढ़ने की हुई जो विशुद्ध विधि की पुस्तकें न होते हुए भी विधि से जुड़ी हों या विधि-विषयक पृष्ठभूमि पर आधारित हों। 1962 में बारह रूपये आठ आने में मैंने यह पुस्तक खरीदी थी और इसे पढ़ने के उपरान्त मुझे लगा कि विधि व्यवसाय से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़ना चाहिए। पुस्तक रोचक है और प्रेरक भी। पुस्तक का पहला अध्याय है— 'Never Trust a Woman' (कभी किसी महिला का विश्वास मत करो)। यह एक वास्तविक घटना पर घटित कहानी है और उससे निसृत होने वाली शिक्षा को समाहित करती है। के. एल. गोबा अपनी रोचक शैली में इस प्रथम अध्याय का प्रारंभ करते हुए लिखते हैं कि युवा जोड़े अक्सर डॉक्टर के क्लिनिक में जाते हैं और कभी-कभी वकील के चैम्बर में भी। कितने युवा दंपती उनके पास आते हैं, यह इस पर निर्भर करता है कि वे कैसे पड़ोस में रहते हैं और उनकी ख्याति कैसी है। इस सभाकक्ष में उपस्थित आदरणीय महिलाएं शंकित न हों।

अध्याय का शीर्षक कुछ भ्रामक है। संपूर्ण घटनाक्रम का सार यह है कि महिला पक्षकार और महिला गवाह से व्यवहार करते समय विधि व्यवसायी को सतर्क रहना चाहिए। इस पुस्तक की भूमिका में श्री गोबा ने एक सिपाही और एक वकील की तुलना की है। लिखा है कि दोनों में बहुत साम्य है। दोनों ही लड़ाई किसी और के लिए लड़ते हैं—सिपाही अपनी मातृभूमि के लिए और वकील अपने पक्षकार के लिए। दोनों ही के आदर्श उद्देश्य होते हैं—सिपाही अपने देश की विजय चाहता है और वकील अपने पक्षकार की। लड़ाई के लिए जाते हुए सिपाही स्वयं को नवीनतम हथियारों से सुसज्जित करता है और वकील नवीनतम न्याय-दृष्टांतों से। दोनों ही के लिए आचरण, लड़ाई और व्यवसायिक सम्मान से जुड़ी अलिखित आचरण संहिताएं हैं। दोनों ही की जीवन शैली साहस और जोखिम उठाने की तत्परता चाहती हैं। यदि सिपाही अति उत्साही हुआ तो जान जा सकती है और यदि वकील अति उत्साही हुआ तो उसकी सनद जप्त हो सकती है। और समानता की पराकाष्ठा तब प्रतीत होती है जबकि कर्नल चढ़ती आयु के कारण सक्रिय रूप से लड़ाई के अयोग्य हो जाता है तो उसकी पदोन्नति जनरल के पद पर कर दी जाती है और वकील में जब जोरदार बहस करने का जज़्बा कम होने लगता है तो उसे जज बना दिया जाता है। और, जब वे अपने पद से अवकाश ग्रहण करते हैं तो उनके पास अपने अतीत का स्मरण करते हुए बहादुरी की अनेक कहानियां सुनाने के अतिरिक्त कुछ बच नहीं रहता।

मैंने इस पुस्तक का ज़िक्र इसलिए किया है कि इस पुस्तक में ख्वाज़ा नाज़िर अहमद का मुकामा भी दर्ज है। उसकी एक झलक आज के संदर्भ में आपके समक्ष प्रस्तुत करने के लिए मैं आतुर हूं।

हमारे जैसे बड़े देश का समाज बहुल और बहुमुखी समाज है। यदि युद्ध हो रहा हो और हमारी सीमाओं पर ज्वाला भड़क रही हो तो यह आवश्यक नहीं है कि देश की एक सौ चार करोड़ की आबादी का प्रत्येक व्यक्ति सीमा पर जाकर खड़ा हो जाये। ज़रूरी यह है कि सैनिक सीमा पर युद्ध करें और सीमाओं के अन्दर के नागरिकों में से प्रत्येक अपने कर्तव्य का निष्ठापूर्वक पालन करे ताकि सीमा पर खड़े सैनिकों के हौंसलें बुलंद रहें और युद्ध की स्थिति में भी देश अपनी गति से चलता रहे। सीमाओं की रक्षा सैनिक करें और अन्दर से दृढ़ता देश के नागरिक प्रदान करें। यदि अभिभाषक अपने कर्तव्य को पहचान कर दृढ़ता और निष्ठा के साथ उसका पालन करता है तो वह राष्ट्र के निर्माण में योगदान देता है। उसका जो समय अपने व्यवसाय के लिए विनियोजित होता है उसे छोड़कर कुछ समय वह समाज सेवा के रूप में देश और समाज के सामने खड़ी समस्याओं से लड़ाई के लिए दे तो उसकी ऐसी भूमिका राष्ट्र के निर्माण में दिया गया अतिरिक्त योगदान है। हमारा देश भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता और चारित्रिक पतन से ग्रस्त है, त्रस्त है। अभिभाषक सक्षम और संपन्न भी होते हैं। उन्हें विधि का ज्ञान होता है। विधि का शासन (Rule of Law) स्थापित करने में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। समाज में उनका सम्मान होता है और उनकी बात समाज गंभीरता से सुनता है। देश और समाज की जो समस्याएं घुन या कैंसर की तरह खा रही हैं उनसे लड़ने में विधि व्यवसायियों की भूमिका महती हो

सकती है और वे एक बेहतर समाज और बेहतर शासन की रचना और स्थापना में अहम भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। आज दो विभूतियों के जन्मदिन और स्वतंत्रता संग्राम की शताब्दी के अवसर पर इस दृष्टिकोण से आत्म निरीक्षण कर कुछ निश्चय कर सकें तो यह आयोजन और आज की संध्या सार्थक होगी।

////////////////////////////////////